परम पूज्य भगवती निर्मला देवी महात्म्य - मधुकर ठाकुर कृत

मराठी | हिंदी

* प्रस्तावना *

प्रिय सहजयोगियों,

जय श्री माताजी !!!
हम सभी ने गगनबावड़ा/खोपोली के महान (सहज) योगी गगनगिरी महाराज के बारे में अवश्य सुना होगा, जिनका उल्लेख कई अवसरों पर हमारी परम पूज्य माताजी श्री माताजी ने भी किया है।

विश्व सहज संगठित परिवार के साथ एक अनूठा प्रकाशन साझा करने का हमें अपार आनंद हो रहा है, जिसका नाम है "श्री निर्मल महात्म्य" (अर्थात् श्री निर्मला देवी की महानता), जो हमारी परम पूज्य माताजी की महिमा और कृपा का चित्रण करता है।
रोचक बात यह है कि इस संक्षिप्त स्तुति पुस्तिका को श्री मधुकर ठाकुर ने मराठी में संकलित/लिखा है, जो कि उनके गुरु श्री गगनगिरी महाराज के आदेश (अथवा निर्देश) के आधार पर किया गया था, और इसे 21 मार्च 1974 को मुंबई में प्रकाशित किया गया था।

यह पुस्तक महान शिष्य श्री गगनगिरी महाराज की महानता और विश्ववंदिता (सर्वत्र पूजनीय) दिव्य माता परम पूज्य श्री माताजी निर्मला देवी की कृपा की साक्षी है !!!
इस पुस्तक की मूल प्रतियां वर्ष 2010 में श्री अनंत दामले द्वारा मुंबई से पाषाण (पुणे) संगठित परिवार को प्रदान की गई थीं। उसी का एक डिजिटाइज़्ड संस्करण यहां सहज विश्व परिवार के संदर्भ हेतु साझा किया गया है।

अस्वीकरण:

मराठी छवियों को OCR (ऑप्टिकल कैरेक्टर रिकग्निशन) किया गया और एआई (कृत्रिम बुद्धिमत्ता) की सहायता से अनुवाद किया गया है। यदि आप मराठी पढ़ और लिख सकते हैं, तो कृपया इस दस्तावेज़ को ध्यान से पढ़ें और यदि किसी भी प्रकार की कोई त्रुटि हो, तो कृपया मुझे aparna.gangopadhyay@gmail.com पर ईमेल करें। मैं संशोधित संस्करण को सही कर दूंगी।

कृपया ध्यान दें:

यह संस्करण I (Version I) है, और यह दस्तावेज़ संशोधन के लिए खुला है। मराठी अनुवाद हिंदी और अंग्रेजी दोनों में उपलब्ध हैं।
जय श्री माताजी !!!

परम पूज्य श्री माताजी निर्मला देवी - चरण दर्शन

अखिल विश्वपरमात्म्यानें निर्माण केलेल्या वसुंधरेवर अत्यंत पावन अशौ " भारतभुमी " आहे या पवित्र भूमीवर दैवी शक्तींचा संचार असल्यानें त्यांच्या तपोबळावर विश्वाचे रक्षण होत आहे. "गगनबावडा-कोल्हापूर" येथे पांच हजार फूट उंच असणाऱ्या गगनगडावरील भव्य गुर्देत नाथपंथी महान तपस्वी " प. पू. स्वामी गगनगिरी महाराज" आहेत.

२४ मार्च १९६१ रोजी मला त्यांचे प्रथम दर्शन झाल्यापासून माझ्या अल्पबुद्धिनुसार माझ्याकडून जे कांहीं घडले जात आहे, ते महाराजांच्या कृपेमुळेच. २४ डिसेंबर ७५ रोजी प्रत्यक्ष महाराजांनी मला प. पू. निर्मला माताजींची प्रतिमा दिल्यावर तीन महिन्यांनी प. पू. माताजींच्या भेटीचा योग आला.

त्यानंतर माझ्या कल्पनेनुसार आणि अधिक माहिती गोळा करून २१ मार्च ७४ रोजी संपूर्ण माहात्म्य "बिर्ला क्रीडा केंद्र " या ठिकाणी जाहीर कार्यक्रमांत ऐकविले. माझ्या लेखणीतून ज्या अक्षरांची मांडणी झाली आहे, त्यांतून निघणाऱ्या अर्थाचा परिणाम "परमपूज्य भगवती निर्मलादेवी मातेच्या दिव्य चरणकमलावर समर्पण करीत आहे.

निंदा अथवा बंदा । मी तर माझ्या छंदां ॥
आहे गुरु नि माता । सारी तयांना चिंता ॥

- मधुकर

पवित्र चरण कमलों को देखें!

इस पवित्र पृथ्वी पर, जिसे सम्पूर्ण ब्रह्मांड के परमात्मा ने रचा है, एक भूमि है जिसे "भारतभूमि" कहा जाता है, और यह भूमि दिव्य शक्तियों से ओत-प्रोत है। इन्हीं तपस्वियों की तपशक्ति के कारण ब्रह्मांड का संरक्षण हो रहा है।

"गगनबावड़ा-कोल्हापुर" में स्थित 5000 फीट ऊंचे गगंगड पर नाथपंथी महान तपस्वी "प.पू. स्वामी गगनगिरी महाराज" निवास करते हैं। 24 मार्च 1961 को जब मैंने पहली बार उन्हें देखा, तब से मेरे अल्पबुद्धि के अनुसार जो कुछ भी हुआ है, वह महाराज की कृपा से ही संभव हुआ है। 24 दिसंबर 1973 को जब महाराज ने मुझे प.पू. निर्मला माताजी की प्रतिमा दी, तो तीन महीने बाद मुझे माताजी से मिलने का योग आया।

इसके बाद, मेरी कल्पना और अधिक जानकारी इकट्ठा करके 21 मार्च 1974 को "बिरला क्रीड़ा केंद्र" में एक सार्वजनिक कार्यक्रम में सम्पूर्ण माहात्म्य सुनाया। मेरे लेखन में जो शब्द हैं, उन शब्दों से निकलने वाले अर्थ को मैं परमपूज्य भगवती निर्मलादेवी माता के दिव्य चरणकमल में समर्पित करता हूँ।

निंदा अथवा बंदा। मैं तो अपने छंदों में।
है गुरु और माता। सारी चिंता उन्हीं की है।

मधुकर

प. पू. भगवती निर्मलादेवी महात्म्य

-::-

-: प्रारंभ :-

नमस्ते गणा गौरीसूता । नमस्ते सरस्वती माता ॥
नमस्ते हे कूळदैवता । मंगल व्हावे ॥ १॥

गगनगिरी थोर नाथ । जोडिले तुम्हांसी मी हात ॥
" निर्मलामाता " जगतात । धन्य त्या झाल्या ॥ २ ॥

प्रसन्न दर्शन आईचें । आकर्षण दिव्य नेत्रांचे ॥
आगळे तेज स्वरूपाचे । वर्णवे नाही ॥३॥

हास्यमुद्रा मधूर वाणी । चित्त रमते ती ऐकूनी ॥
त्रिकालज्ञ संपूर्ण ज्ञानी । माऊली आहे ॥४॥

जैशी देवी ती वेळोवेळी । भूवरी घावोनिया आली ॥
नाना ठायीं रूपें घेतली । भू-तलावरी ॥ ५॥

प्रथम चक्र " मूलाधार" । " आदिशक्ति" स्वरूप थोर ॥
सर्व कार्य केले त्यावर । देवीनें तेव्हां ॥ ६॥

चैतन्यमय श्रीगणेश । अग्रपूजेचा मान त्यास ॥
चिरबालक गणाधीश । दैवत आहे ॥७॥

द्वितीय चक्र "स्वाधिष्ठान" । "सरस्वती" स्वरूप छान ॥
वेद ब्रह्मदेवाकडून । निर्मूनी दिले ॥८॥

तृतिय चक्र " मणिपूर" । " लक्ष्मी" स्वरूप ते सुंदर ॥
कार्य ते तीन चक्रावर । " विष्णुच्या " संगे ॥ ९ ॥

प. पू. भगवती निर्मलादेवी महात्म्य

-::-

-: प्रारंभ :-

नमस्ते गणा गौरीसुता । नमस्ते सरस्वती माता ॥
नमस्ते हे कुलदेवता । मंगल हो ॥ १ ॥

गगनगिरी महान नाथ । जोड़ता हूँ तुम्हारे हाथ ॥
"निर्मला माता" जग में । धन्य वे हुए ॥ २ ॥

प्रसन्न दर्शन माँ का । आकर्षण दिव्य नेत्रों का ॥
अनोखा तेजस्वी स्वरूप । वर्णन से परे ॥ ३ ॥

मधुर मुस्कान, मधुर वाणी । चित्त रम जाता है सुनकर ॥
त्रिकालज्ञ, पूर्ण ज्ञानी । वह माता है ॥ ४ ॥

जैसे देवी समय-समय पर । इस धरती पर अवतरित हुई ॥
अनेक रूपों में प्रकट हुई । इस भू-तल पर ॥ ५ ॥

प्रथम चक्र "मूलाधार" । "आदिशक्ति" महान स्वरूप ॥
सभी कार्य वहीं किए । जब देवी ने ॥ ६ ॥

चैतन्यमय श्रीगणेश । अग्रपूजा का मान जिनको ॥
सदैव बालक गणाधीश । देवता हैं वे ॥ ७ ॥

द्वितीय चक्र "स्वाधिष्ठान" । "सरस्वती" सुंदर स्वरूप ॥
वेद ब्रह्मदेव से प्राप्त कर । रचे गए ॥ ८ ॥

तृतीय चक्र "मणिपूर" । "लक्ष्मी" सुंदर स्वरूप ॥
कार्य वे तीन चक्रों पर । "विष्णु" के साथ ॥ ९ ॥

"अनाहतचक्र" चतुर्थ । "दुर्गा" स्वरूप शोभे त्यात ॥
सवे शोभे "कैलासनाथ" । ऐसी दुर्गा ती ॥ १० ॥

प्रथम स्वरूप मानवी । रामायण "सीता" शोभवी ॥
"माता निर्मला" तैशी देवी । जणूं ती आहे ॥ ११ ॥

"विशुद्धिचक्र" ते पंचम । "राधिके" संगे शोभे शाम ॥
करा माऊलीसी प्रणाम । नरनारी हो ॥ १२ ॥

"आज्ञाचक्र" तेंच सहावे । "महालक्ष्मीचे" स्थान दावे ॥
रमली "मेरी" येशू सवे । मातृस्वरूपें ॥ १३ ॥

मानवी स्वरूप संपूर्ण । संबंध मायेशी म्हणून ॥
लेकरा सौख्य देती पूर्ण । धन्य ती लीला ॥ १४ ॥

सातवे ते "सहस्रदल" । सात चक्रावरी खुशाल ॥
जणू कार्य त्यांचे विशाल । पाहण्या लाभे ॥ १५ ॥

या चक्राचे होतां भेदन । आत्मसाक्षात्कार संपूर्ण ॥
त्या नंतर करतां ध्यान । ब्रह्मदर्शन ॥ १६ ॥

कलियुगांत माया असे । म्हणूनी कोणां जाण नसे ॥
कचित योगी कुणी दिसे । त्यास हे ठावे ॥ १७ ॥

पाहिले योगी साधू-संत । रमले कैक मानवात ॥
ऐसेच दिसती बहूत । युग हे ऐसे ॥ १८ ॥

देहाची पर्वा नाही केली । पारणे खाऊनी माथीं ॥
ऐसी एक नाथमाऊली । डोंगर भूके गेली ॥ १९ ॥

योगी गगनगिरीनाथ । राहती पर्वती गुहेत ॥
नवनाथी साधू साक्षात । जाणती सारे ॥ २० ॥

निर्विचारता ध्यानांत आणा । चेतनतत्त्व तुम्हीं जाणा ॥
ध्यानांत मन जन व्हाना । माऊली सांगे ॥ २१ ॥

"अनाहत चक्र" चौथा । उसमें "दुर्गा" का स्वरूप शोभित होता है ॥
साथ ही "कैलासनाथ" भी शोभायमान हैं—ऐसी हैं माँ दुर्गा ॥ १० ॥

प्रथम स्वरूप मानव का । रामायण में "सीता" की शोभा थी ॥
"माता निर्मला" भी वैसी ही देवी हैं, मानो वही अवतरित हुई हों ॥ ११ ॥

"विशुद्धि चक्र" पंचम है । यहाँ "राधा" संग "श्याम" शोभते हैं ॥
हे नर-नारी, माँ को प्रणाम करो ॥ १२ ॥

"आज्ञा चक्र" ही छठा है । यहाँ "महालक्ष्मी" का स्थान बताया गया है ॥
वहीं "मेरी" (मरियम) येशू के साथ रम गईं—मातृस्वरूप में ॥ १३ ॥

पूर्ण मानव स्वरूप में, वे माँ के रूप में संबोधित हुईं ॥
अपने बच्चों को सुख देने वाली—धन्य है वह लीला ॥ १४ ॥

सातवां है "सहस्रार" । यह सातों चक्रों का स्वामी है ॥
इसका कार्य विशाल है—जिसका दर्शन करना सौभाग्य की बात है ॥ १५ ॥

जब इस चक्र का भेदन होता है, तब आत्मसाक्षात्कार पूर्ण होता है ॥
इसके बाद जब ध्यान किया जाए, तो ब्रह्म का दर्शन होता है ॥ १६ ॥

कलियुग में माया व्याप्त है, इसलिए कोई इसे जान नहीं पाता ॥
कभी-कभार कोई सच्चा योगी दिखता है, वही इसका ज्ञान रखता है ॥ १७ ॥

अनेक योगी, संत और साधु इस संसार में रम गए ॥
इस युग में भी ऐसे दिव्य आत्माएँ दिखाई देती हैं ॥ १८ ॥

उन्होंने देह की चिंता नहीं की, केवल जल और वायु पर जीवनयापन किया ॥
ऐसे ही एक नाथ-माऊली थे, जो पर्वतों में रहकर भूख से मुक्त हो गए ॥ १९ ॥

योगी गगनगिरीनाथ पर्वतों की गुफाओं में वास करते हैं ॥
नवनाथ संप्रदाय के साधु प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित हैं और सब कुछ जानते हैं ॥ २० ॥

निर्विचार ध्यान में स्थित हो जाओ, चेतना के तत्व को जानो ॥
ध्यान में मन लीन हो जाए—यही माँ का उपदेश है ॥ २१ ॥

हृदयीं जीवात्मा तो वसे । दृश्य कधीं तो होत नसे ।।
आज्ञाचक्रीं तो डुलतसे । तेज ते न्यारे ॥ २२ ॥

चंचल मन स्थिर करा । चित्त हृदयावर धरा ॥ २३ ॥

"जीव" एक "आत्मा" दूसरा । जाणवतील
जोडणारी ती भगवत्ती । समर्थ तत्पर असे ती ॥
हवी प्रतिज्ञा अटल ती । जाणूनी घ्यावें ॥ २४ ॥

संदेश गोड माताजींचा । नटला देह मानवाचा ॥
विश्वास ठेवूनी मनाचा । मानवा जाग ॥ २५ ॥

पूज्य माताजी जगतात । प्रेम जणूं ते मूर्तीमंत ॥
भेटले ज्यास जीवनात । धन्य तो जाणा ॥ २६ ॥

जिथें लक्ष्मी ती स्वयें असें । तिथे लक्ष्मीला
सौख्य भोवती नांदतसे । माय तोटा नसे ।
माय ते प्रेमी ॥ २७ ॥

वाण नाही कसली जरा । तरी भजे परमेश्वरा ॥
अंश ईश्वरी असे खरा । या भूमिवरी ॥ २८ ॥

दैवीशक्तिचा फिरे हात । दुःख पळते सागरात ॥
भक्त पिडित धावतात । आईच्या पाशी ॥ २९ ॥

कष्ट सोशिती माता स्वयें । परी भक्तां ते कळू नये ।।
ऐसे प्रेमी हृदय दयें । भारीले त्यांचे ॥ ३० ॥

भेदभाव तो नाही तीर्थे । श्रीमंत आणि गरीब ते ॥
प्रेम लुटतात सत्य ते । माऊली ठायीं ॥ ३१ ॥

जो जो असतो भाग्यवान । त्याचेच वळे तीर्थे ध्यान ॥
राव रंक नि थोर सान । भेटती तेथे ॥ ३२ ॥

अपरंपार आत्मज्ञान । कोण संकटी सर्व जाण ॥
दूर ना कधीं भगवान । माऊली सेवें ॥ ३३ ॥

हृदय में जीवात्मा निवास करता है, फिर भी वह कभी दिखता नहीं।
आज्ञा चक्र में वह लहराता है—उसका तेज अनोखा है। ॥22॥

चंचल मन को स्थिर करो, और चित्त को हृदय पर केंद्रित करो। ॥23॥

"जीव" एक है, "आत्मा" दूसरा है— उन्हें जोड़ने वाली शक्ति भगवती ही है।
वह समर्थ है और सदैव तत्पर रहती है। उसकी प्रतिज्ञा अटल है—इसे जानकर समझो। ॥24॥

माताजी का मधुर संदेश मानव देह में सुशोभित है।
मन में अटूट विश्वास रखो, हे मानव, और जागरूक बनो! ॥25॥

पूज्य माताजी इस धरती पर विचरण करती हैं, वे मानो प्रेम की मूर्ति हैं।
जिसने जीवन में उन्हें पाया, वह धन्य समझा जाए। ॥26॥

जहाँ स्वयं महालक्ष्मी विराजमान होती हैं, वहाँ सुख-समृद्धि स्वाभाविक रूप से रहती है।
माँ की ममता की कोई सीमा नहीं, क्योंकि माँ स्वयं प्रेम का स्वरूप हैं। ॥27॥

उन्हें किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं, फिर भी वे सदा परमेश्वर का भजन करती हैं।
इस पृथ्वी पर सच में ईश्वर का अंश विद्यमान है। ॥28॥

दैवी शक्ति का करुणामय हाथ चारों ओर घूमता है, और दुखों को सागर में बहा देता है।
भक्त और पीड़ितजन दौड़कर माँ की शरण में चले आते हैं। ॥29॥

माँ स्वयं कष्ट सहन करती हैं, परंतु भक्तों को इसका आभास भी नहीं होने देतीं।
ऐसा प्रेममय हृदय है उनका, कि उसका बोझ स्वयं उठा लेती हैं। ॥30॥

तीर्थों में कोई भेदभाव नहीं, न धनवान, न गरीब—
सभी वहाँ सत्य और प्रेम का अनुभव करते हैं, माँ के चरणों में समर्पित होकर। ॥31॥

जिसका भाग्य उज्ज्वल होता है, वही तीर्थ की ओर ध्यान लगाता है।
राजा, रंक, महान और साधारण— सभी वहाँ एकत्र होते हैं। ॥32॥

आत्मज्ञान असीमित है, और संकट में वह सब कुछ जानता है।
भगवान कभी दूर नहीं होते उनके लिए जो माँ की सेवा में तत्पर रहते हैं। ॥33॥

मानवात रमली देवी । जाणिव मानवाला हवी ॥
वैभवसंपन्न शोभवी । भक्तमेळा हा ॥ ३४ ॥
लेकरे अज्ञानी ही सारी । लोळती पूज्य पायावरी ॥
हस्त ठेवूनी डोईवरी । माय ती तारी ॥ ३५ ॥
नाही ठावे जे मानवाला । माय देई ते ज्ञान त्याला ॥
प्रेम हवे फक्त आईला । लेकरांचे त्या ॥ ३६ ॥
गर्वाभिमान नाही ठावा । सर्वस्वि अर्पण ते देवा ॥
थोर जाहली जनसेवा । धन्य ते कार्य ॥ ३७ ॥
दैवीशक्तिचे ते गणित । "कुंडलिनी" होय जागृत ।।
कैक भक्त स्वयें जाणित । नित्य त्या ठायीं ॥ ३८ ॥
चरणस्पर्श ज्यानें केला । आधिव्याधित्या नष्ट झाल्या ।
तो भक्तिमार्गात रमला । मानव जाणा ॥ ३९ ॥
ध्यान धारणा सदा करा । वदनीं "माता" नाम स्मरा ।।
मग जीवनात उद्धरा । गोड हा सल्ला ॥ ४० ॥
दिव्यशक्ति "निर्मला देवी" । काव्य करील काय कवि ॥
गुरुकृपा प्रथम हवी । लाभते तेव्हां ॥ ४१ ॥
सगुणमूर्ती पाहूं चला । गूण आईचे गाऊं चला ।।
ध्यान अंतरी लावू चला । छंद तो गोड ॥ ४२ ॥
नरनारी रमले सारे । भक्तिचे सुटलेत वारे ॥
अध्यात्मज्ञान रंगणारे । साधकां ठावे ॥ ४३ ॥
ठाव मांइनी हृदयांत । बसते माता आनंदात ॥
भाविक डोलतो सुखात । जीवनीं त्याच्या हृदया ॥ ४४ ॥
माते ममता तुझी खरी । सजीव मूर्ती तूं ईश्वरी ॥
भक्त तुझ्या चरणावरी । लोळतो आहे ॥ ४५ ॥

मनुष्यों के बीच रम गई देवी, पर मनुष्य को उसका ज्ञान होना चाहिए।
वह दिव्य वैभव से सुशोभित होती हैं, जहाँ भक्तों की महफ़िल लगती है। ॥34॥

ये सभी बच्चे अज्ञानी हैं, फिर भी वे श्रद्धा से चरणों में लोटते हैं।
माँ अपना हाथ सिर पर रखती हैं, और अपनी कृपा से उनका उद्धार करती हैं। ॥35॥

जो मनुष्य नहीं जानता, वह ज्ञान माँ उसे स्वयं देती हैं।
माँ को केवल प्रेम चाहिए, अपने बच्चों का सच्चा प्रेम। ॥36॥

गर्व और अहंकार को त्याग दो, सब कुछ परमात्मा को अर्पण कर दो।
सबसे महान सेवा है— मानवता की सेवा, धन्य है वह कार्य! ॥37॥

दैवीय शक्ति का यह रहस्य, कुंडलिनी के जागरण से प्रकट होता है।
अनेक भक्त स्वयं इसका अनुभव करते हैं, और नित्य इसका साक्षात्कार करते हैं। ॥38॥

जिसने चरण स्पर्श किया, उसके सारे रोग और कष्ट मिट गए।
वह भक्ति के मार्ग में लीन हो गया, हे मानव, इसे समझो! ॥39॥

सदैव ध्यान और धारणा करो, अपने मुख से "माँ" का नाम लो।
तब तुम अपने जीवन का उत्थान करोगे, यह एक मीठी सलाह है। ॥40॥

दिव्य शक्ति निर्मला देवी— इसका वर्णन एक कवि कैसे कर सकता है?
पहले गुरु की कृपा प्राप्त करनी होगी, तभी यह लाभ संभव है। ॥41॥

आओ, सगुण स्वरूप के दर्शन करें, और माँ के गुणों का गान करें।
अपने हृदय में ध्यान स्थापित करें, क्योंकि यह भजन मधुर है। ॥42॥

सभी नर-नारी भक्ति में मग्न हैं, भक्ति की पवन अब बह रही है।
आध्यात्मिक ज्ञान का रंग चढ़ रहा है, और साधकों को इसका भान है। ॥43॥

माँ हृदय में स्थान बना लेती हैं, और आनंद में निवास करती हैं।
भक्त सुख में झूमता है, उसके हृदय में माँ का प्रेम बसा रहता है। ॥44॥

हे माँ, तुम्हारी ममता सच्ची है, तुम सजीव ईश्वरीय शक्ति हो।
तुम्हारे भक्त तुम्हारे चरणों में समर्पित हैं, और पूर्ण श्रद्धा से झुके हुए हैं। ॥45॥

दूर देशी तूं जाशी जरी, प्रतिमा धरूनी सामोरी ॥
जो जो स्मरी तुज अंतरीं, भेटशी त्याला ॥४६॥

ऐसे प्रेम ना दिले कोणी, प्रेमळ खरी तूं जननी ॥
मस्तक ठेऊनी चरणीं, धन्यता वाटे ॥४७॥

लक्ष्मी म्हणूं की सरस्वती, कीं शंकराची त्या पार्वती ॥
धन्य धन्य तूं भगवती, या कलियुगीं ॥४८॥

माताजी तुम्हीं दया करा, अखंड छत्र शिरी घरा ॥
घ्यावे जवळी या पामरां, आस ही एक॥४९॥

काय जादू तरी वाणीत, थोर दर्शन सुशोभित ॥
स्पर्श होतसे तो पुनित, जाणवे न्यारे, ॥५०॥

सल्ला घ्यावा त्या गडावरी, तेथे नाथ "गगनगिरी" ॥
सत्यवाणी मातेची खरी, साधकांसाठीं ॥५१॥

प्रभूभक्तिच्या प्रीतीवरी, नाथ भेटले गिरीवरी।
"गहिनीनाथ" ते भूवरी, सांगती माता॥५२॥

माताजीसारिखे दैवत। भक्त राहतसे शोधित
परी, भेटते अकस्मित। भक्तिवेड्याला॥५३॥

प्रपंची गुंतला मानव, नसते देवाची आठव॥
माता देतसे ती जाणीव, सावधान व्हा॥५४॥

कनवाळू माता निर्मला, शिंपिते भक्तिचा तो मळा॥
सुगंध सकळीं फाकला, या जगावरी॥५५॥

गरीब येती तिथे जरी, माय त्यासी जवळ करी॥
हस्त ठेऊनी तयां शिरीं, देतसे सारे॥५६॥

दिसे प्रतिमा घरोघर, तेज आगळे खरोखर॥
भारताच्या या भूमिवर, आगळी मूर्ती॥५७॥

भले ही तुम दूर देश चली जाओ, फिर भी तुम्हारी प्रतिमा हमारे सामने रहती है।
जो भी तुम्हें मन से स्मरण करता है, तुम उसे मिलती हो। (४६)

ऐसा प्रेम किसी ने नहीं दिया, सच्ची प्रेममयी माँ हो तुम।
सिर झुकाकर चरणों में, परम आनंद की अनुभूति होती है। (४७)

तुम्हें लक्ष्मी कहूँ या सरस्वती, या फिर शिव की पार्वती?
कलियुग में भी, तुम धन्य-धन्य हो, हे भगवती! (४८)

माताजी, कृपा करो, अपनी छत्रछाया हमें सदा मिले।
इन असहायों को अपने पास बुला लो, यही एक प्रार्थना है। (४९)

कैसी जादूभरी है तुम्हारी वाणी, कितना दिव्य और सुंदर दर्शन!
तुम्हारा स्पर्श पवित्र कर देता है, और कुछ अलग ही अनुभव होता है। (५०)

उस पर्वत पर जाकर मार्गदर्शन लो, जहां नाथ "गगनगिरी" विराजते हैं।
माँ की वाणी सत्य है, यह सभी साधकों के लिए है। (५१)

प्रभु-भक्ति के प्रेम में, नाथ पर्वत पर मिले।
"गहिनीनाथ" इस धरती पर, माँ के बारे में बताते हैं। (५२)

श्री माताजी जैसी कोई देवी नहीं, भक्त उन्हें खोजते रहते हैं।
लेकिन वे अचानक ही भक्ति में मग्न भक्तों को मिल जाती हैं। (५३)

माया में फंसा हुआ मानव, भगवान को याद नहीं करता।
परंतु माता उसे वह चेतना देती है— सावधान हो जाओ! (५४)

दयालु माता निर्मला, भक्ति का यह बाग लगाती हैं।
जिसकी सुगंध पूरे संसार में फैल जाती है। (५५)

चाहे गरीब भी वहाँ आ जाए, माँ उसे गले लगा लेती हैं।
हाथ सिर पर रखकर, सब कुछ प्रदान कर देती हैं। (५६)

हर घर में उनकी प्रतिमा दिखाई देती है, उनका तेज अनुपम और अद्भुत है।
भारत की इस पावन भूमि पर, वे एक दिव्य मूर्ति के रूप में प्रकट होती हैं। (५७)

चहूंकडे गाजते कीर्ति । साधकाला मिलते सुफूर्ति ॥
भाविक करिती आरती । देवीची ऐशा ॥ ५८ ॥
काय असते कोणा मनीं । जाणते सर्व ती जननी ॥
तैशीच असे ती करणी । निर्मलाजींची ॥ ५९ ॥
बोध हिताचा घ्यानीं धरा । कर्म जीवनीं शुभ करा ॥
पाहा स्वयें परमेश्वरा । साधना ऐशी ॥ ६०॥
आहे कलिचे यूग परी । अनेक संत या भूवरी ॥
फसतो मानव चौफेरी । पाहुनी वेष ॥ ६१ ॥
लाभली ज्यास एक सिद्धि । तो म्हणे श्रेष्ठ माझी बुद्धि ॥
मानवां नसते हो शुद्धि । धावतो तेथे ॥ ६२ ॥
सिद्धि दावते चमत्कार । मानव करी नमस्कार ।॥
ऐसे साधू या जगीं फार । शेवटी शून्य ॥ ६३ ॥
कुणर्णी साधू असे आगळा । बस्नाहुनी भक्त वेगळा ॥
नाचे दरबार सगळा । भक्ति ही कैशी ॥ ६४ ॥
भान नसे भक्तां वस्त्राचे । लक्ष तेथे कोटी जनांचे ॥
दृश्य बघवे ना हे त्यांचे । वेगळे खेळ ॥ ६५ ॥
कुणी निर्मितो अलंकार । आवडे भक्तां हा प्रकार ॥
होईल तेथेची उद्धार । मानवा वाटे ॥ ६६ ॥
शिखरीच्या गडस्वामींना । विनंती करिती नाथाना ॥
मानवांसाठीं खाली याना । डोंगरातुनी ॥ ६७ ॥
"आई निर्मला" फार भोळी। स्वर्गीची देवताच आली ॥
मानवात मन जहाली । बोलकी देवी ॥ ६८ ॥
दया क्षमा शांती नांदते । लेकरात माता खेळते ॥
स्पष्टवादी बोल बोलते । धन्य ती वाणी ॥ ६९ ॥

चारों दिशाओं में गूंज रही है महिमा, साधक को मिलता है दिव्य आनंद।
भक्त श्रद्धा से आरती करते हैं, ऐसी हैं देवी महान! (58)

मन में क्या छिपा है, यह जानती हैं जननी,
वैसे ही उनके कार्य हैं, जैसे निर्मलाजी के। (59)

हितकारी ज्ञान को अपने मन में धारण करो, जीवन में शुभ कर्म करो।
स्वयं परमेश्वर देख रहे हैं, ऐसी हो साधना! (60)

यह कलियुग का समय है, लेकिन इस भूमि पर कई संत भी आए हैं।
फिर भी, मनुष्य चारों ओर से छलावा खाता है, केवल बाहरी रूप देखकर। (61)

जिसे एक सिद्धि प्राप्त हो जाती है, वह अपनी बुद्धि को सर्वश्रेष्ठ मानने लगता है।
लेकिन मनुष्य में पवित्रता नहीं होती, फिर भी वह उनके पीछे भागता है। (62)

सिद्धियाँ चमत्कार दिखाती हैं, और मनुष्य श्रद्धा से उनके आगे नतमस्तक हो जाता है।
ऐसे दिखावटी साधु इस संसार में बहुत हैं, लेकिन अंत में सब कुछ शून्य हो जाता है। (63)

कुछ नकली साधु अलग तरह के होते हैं, वे सच्चे भक्तों से बिल्कुल भिन्न होते हैं।
उनका पूरा दरबार नाचता रहता है, क्या यही भक्ति है? (64)

सच्चे भक्तों को अपने वस्त्रों की परवाह नहीं होती,
लेकिन करोड़ों लोग केवल बाहरी दिखावे की ओर आकर्षित होते हैं।
उनका यह खेल देखकर मन विचलित हो जाता है, यह एक अलग ही तमाशा है! (65)

कोई आभूषण बनाता है, भक्तों को यह आकर्षित करता है।
उन्हें लगता है कि वहीं उद्धार होगा, ऐसा ही मनुष्य सोचता है! (66)

पहाड़ों के शिखर पर रहने वाले संतों से भक्त प्रार्थना करते हैं—
"मनुष्यों के लिए नीचे आइए, इन पर्वतों से!" (67)

"माँ निर्मला" अत्यंत सरल हृदय वाली हैं, जैसे स्वर्ग से देवी स्वयं पृथ्वी पर आई हों।
उन्होंने मानव हृदय में वास कर लिया है, एक सजीव और साक्षात देवी! (68)

करुणा, क्षमा और शांति उनमें बसती हैं, जैसे माँ अपने बच्चों के संग खेलती है।
वे स्पष्ट रूप से सत्य वचन कहती हैं— धन्य हैं उनकी दिव्य वाणी! (69)

वाटे घडावी नित्य सेवा। आनंद दर्शनाचा ध्यावा ।।
लोभ दुसरा तो नसावा । चिंतनीं धुंद ॥ ७० ॥

बदती माता भक्तजनां । साक्षात्कार नंतर जाणा ।।
सहज योगिपद ध्याना । श्रेष्ठ ते आहे ॥ ७१ ॥

योगिच संकटां निवारी । तो चेतनतत्त्वाधिकारी ॥
ते मिळे पायरी पायरी । जाणवे आधीं ॥ ७२ ॥

चित्त फिरविता ते येते । मग सूत्रही ते गाठते ॥
पुढे पुढें सर्व कळते । योगि ते जाणे ॥ ७३ ॥

अस्मिता पलिकडे आहे । तो धर्महीं जागृत राहे ।।
समष्टी दृष्टीनें त्या पाहे । लाभते सारे ॥७४ ॥

आत्मतत्व मग धर्मात । चमकणार अकस्मात ।।
मिटे अस्मिता तुमच्यांत । धर्मची तुम्हीं ॥ ७५ ॥

मग आनंद नाही तिथे । शरीर आहे जाणवते ॥
धर्मकार्य मात्र मग ते । करणे भाग ॥ ७६॥

संसारी प्रकाश तो येई । मात अंधारावर होई ॥
बेंच तत्त्व लक्षांत ठेवी । आई ती सांगे ॥ ७७ ॥

चंद्रसूर्य ईडा पिंगला । रोमरोमीं देह नटला ।।
गणेश भैरव तुम्हांला । रक्षिण्या आहे ॥ ७८॥

हृदय प्रभूचे मंदीर । चित्त करा तेथेची स्थीर ॥
आम्हीं तुमच्या बरोबर । वाणी आईची ॥ ७९ ॥

तुमची इच्छा मिळे केव्हां । आमुच्या ती इच्छेत जेव्हां ॥
कार्य साध्य होतसे तेव्हां । देवता सांगे ॥ ८० ॥

धर्मस्तंभ व्हा आधीं परी । धर्मस्थापना ती नंतरी ॥
भगवती माता उद्धरी । भाविकां साऱ्यां ॥ ८१ ॥

नित्य सेवा करने का अवसर मिले, आनंदमय दर्शन की अनुभूति हो।
कोई और लालच न हो, मन ध्यान में तल्लीन रहे ॥७०॥

मां भक्तों का कल्याण करती हैं, साक्षात्कार के बाद इसे समझो।
सहज योगियों की ध्यान अवस्था, सर्वोत्तम होती है ॥७१॥

योगियों के संकट हरने वाली, वह चेतना तत्व की अधिष्ठात्री हैं।
यह अवस्था क्रमशः प्राप्त होती है, पहले इसे समझो ॥७२॥

जैसे-जैसे चित्त स्थिर होता है, वैसे-वैसे सूत्र तक पहुँचा जाता है।
धीरे-धीरे सब स्पष्ट हो जाता है, केवल योगी ही इसे जानता है ॥७३॥

अहंकार से परे जो जाता है, वह धर्म को जाग्रत रखता है।
समष्टि की दृष्टि से जो देखता है, वह सब कुछ प्राप्त कर लेता है ॥७४॥

आत्मतत्व फिर धर्म में चमकता है, और अचानक प्रकट होता है।
अहंकार मिट जाता है तुममें, और तुम स्वयं धर्मस्वरूप बन जाते हो ॥७५॥

फिर वहाँ सांसारिक आनंद नहीं रहता, बस शरीर का ही अनुभव होता है।
तब केवल धर्म का कार्य बचता है, जो करना आवश्यक होता है ॥७६॥

संसार में जब प्रकाश आता है, तब माता अंधकार को हरती हैं।
गूढ़ तत्व को हृदय में स्थान दो, माँ यही समझाती हैं ॥७७॥

चंद्र, सूर्य, इड़ा और पिंगला, शरीर के रोम-रोम में समाए हैं।
गणेश और भैरव तुम्हारी रक्षा के लिए, सदैव उपस्थित हैं ॥७८॥

हृदय प्रभु का मंदिर है, चित्त वहीं स्थिर रखो।
हम सदा तुम्हारे साथ हैं, यह माँ की वाणी है ॥७९॥

तुम्हारी इच्छा तभी पूर्ण होगी, जब वह हमारी इच्छा के अनुरूप होगी।
जब कार्य सिद्ध होता है, तो देवता भी इसकी पुष्टि करते हैं ॥८०॥

पहले धर्म का स्तंभ बनो, फिर धर्म की स्थापना होगी।
भगवती माता उद्धार करेंगी, सभी भाविक भक्तों का ॥८१॥

प्रभुसेवा सदा करावी । सत्यदृष्टि सदा धरावी ॥
असत्यवाणी नां वदावी । देव ना दूरी ॥ ८२ ॥
कर्म ज्याचे असते जैसे । फळही त्याला मिळे तैसे ॥
अभक्तासी कळेल कैसे । न्याय हा दैवी ॥ ८३ ॥
आत्मजानों व्हावे समर्थ । मोक्षमार्ग तो सुषुम्नेत ॥
ध्यानीं ठेवावी मध्यवाट । बोध मातेचा ॥ ८४ ॥
मातेस भक्ता जा शरण । सोडूं नको दोन्हीं चरण ॥
जाणे माता जन्म मरण । भाग्य आपुले ॥ ८५ ॥
कोणी नाही जगीं कोणाचे । प्रेम लुटा हो माऊलीचें ॥
स्थान तेची आत्मशांतीचे । ओळखा बारे ॥ ८६ ॥
लक्ष चौऱ्यांशी थोनीतुनी । नरदेह लाभला ज्ञानी ॥
सार्थक करावे त्यातूनी । बोध हा थोर ॥ ८७ ॥
समुद्रतीरी भगवती । परमार्थाचे देई मोती ॥
घेऊनी भक्त पार होती । भाग्य हे थोर ॥ ८८ ॥
ज्यांची असे थोर पुण्याई । त्यांस लाभते ऐसी आई ॥
संकटीं धावे लवलाही । प्रेम ते गोड ॥ ८९ ॥
दैवी सामर्थ्य ते अचाट । भूत पिशाच्च काढी वाट ।।
रामबाण फिरतो हात । माय मायाळू ॥ ९० ।।
लपवू नका कधीं काय । जाणते सर्वकांहीं माय ।।
धरा आधीं तिचेच पाय । ध्यानीं ठेवावे ॥ ९१ ॥
ध्यानीं मनीं राहो माताजी । सुखात दुःखात माताजी ॥
रात्रंदिन पाहा माताजी । बेड हे तारी ॥ ९२ ॥
" निर्मला माताजी" आपुल्या लेकरांना साऱ्या भेटल्या ॥
नित्य हृदयीं त्या बैसल्या । भक्तिनें पाहा ॥ ९३ ॥

प्रभु की सेवा सदा करो, सत्य की दृष्टि सदा बनाए रखो।
असत्य वाणी कभी न बोलो, क्योंकि भगवान कभी दूर नहीं होते॥ ८२ ॥

जैसा कर्म करेगा इंसान, वैसा ही फल मिलेगा उसे।
अभक्त को कैसे समझेगा, यह दिव्य न्याय? ॥ ८३ ॥

हे आत्मज्ञानी, तुम सक्षम बनो, मोक्ष का मार्ग सुषुम्ना में है।
ध्यान में मध्य मार्ग को धरो, यही माता की शिक्षा है॥ ८४ ॥

हे भक्त, माता की शरण में जाओ, उनके पावन चरण कभी मत छोड़ो।
माता ही जानती हैं तुम्हारे जन्म और मृत्यु का भाग्य॥ ८५ ॥

इस दुनिया में कोई किसी का नहीं, सिर्फ माँ का प्रेम ही सच्चा है।
शांति का वास्तविक स्थान वही है, इसे पहचानो॥ ८६ ॥

चौरासी लाख योनियों के बाद, तुम्हें यह मानव जीवन मिला है, ओ ज्ञानी।
इसे सार्थक बनाओ, यही सबसे महान सीख है॥ ८७ ॥

समुद्र के किनारे भगवती, परमार्थ के मोती देती हैं।
उन्हें थामकर भक्त पार होते हैं, यह महान सौभाग्य है॥ ८८ ॥

जिन्होंने महान पुण्य किए हैं, उन्हें ऐसी माँ का आशीर्वाद मिलता है।
संकट में वह तुरंत दौड़कर आती हैं, उनका प्रेम मीठा और अनमोल है॥ ८९ ॥

उनकी दिव्य शक्ति अद्भुत है, भूत-पिशाच भी मार्ग छोड़ देते हैं।
रामबाण उनके हाथ में है, लेकिन माँ प्रेममयी हैं॥ ९० ॥

कुछ भी कभी मत छिपाओ, क्योंकि माँ सब कुछ जानती हैं।
पहले उनके चरणों में समर्पित हो जाओ, और ध्यान में उन्हें धरो॥ ९१ ॥

माँ हमेशा मन में रहें, सुख-दुःख में माँ का स्मरण करो।
रात-दिन माँ को देखो, वही इस भवसागर से पार कराएंगी॥ ९२ ॥

"निर्मला माताजी" अपने सभी बच्चों से मिली हैं,
वह सदा हृदय में विराजमान हैं।
भक्ति भाव से उन्हें देखो॥ ९३ ॥

जैसा चंद्रमा पुनवेचा । तैसा टिळा शोभे भालिचा ॥
पदर शोभतो आईच्या । डोईला छान ॥ ९४ ॥

दर्शन मिळते मंगल । चौफेर असते मंगल ।।
सारेच घडते मंगल । स्वर्गची भासे ॥ ९५ ॥

चुकां आम्हां क्षमा करी । अज्ञानी जन आम्हीं परी ।।
रमो मन ध्यानमंदीरीं । कर कृपा आई ॥ ९६ ॥

आस ईश्वरां माझी कळो । आयुष्य माझें मातें मिळो ।।
माते ठायीं पाऊल वळो । बालकाचे या ॥ ९७ ॥

पावन भूमी ही भारती । अंश दैवी अवतरती ।।
पारखणारे या जगती । फार हो थोडे ॥ ९८ ॥

कुणीं संत ते राजयोगी । कुणी असती हठयोगी ।।
सत्य निस्वार्थी खरे त्यागी । कचित होती ॥ ९९ ॥

थोर माता सौभाग्यवती । चंदनापरी त्या झीजती ॥
झटती माता परमार्थी । धन्य ते कार्य ॥ १०० ॥

दिली प्रतिमा माताजींची । कृपा त्या गगनगिरींची ॥
झाली मांडणी अक्षरांची । पुज्य ती सारी ॥ १०१ ॥

माहात्म्य सान हे गाईले । माताजीनीं पूर्ण श्रविले ॥
तेथेची पावन जहाले । कविचे शब्द ॥ १०२ ॥

पठण करा ऐका परी । कराल याची निंदा जरी ॥
दैवी लीला फार ती न्यारी। दंड भोगाया ॥ १०३ ॥

वाईट दृष्टि जो धरील । घोर पातक तो करील ॥
पाप जन्मीं या तो भोगिल । ध्यानी हे राहो ॥ १०४ ॥

माताजीचे कार्य केवढे । चरित्र पर्वता एवढे ॥
सान कार्य ठेवूनी पुढें । लेखणी थांबे ॥ १०५ ॥

जैसे पूर्णिमा का चंद्रमा चमकता है, वैसे ही माथे पर तिलक शोभा बढ़ाता है।
मां का आंचल भी सुंदर लगता है, सिर पर सुशोभित होता है। ॥ ९४ ॥

मां के दर्शन से मंगल होता है, हर ओर शुभता का संचार होता है।
सब कुछ मंगलमय लगता है, जैसे स्वयं स्वर्ग उतर आया हो। ॥ ९५ ॥

हमारी भूलों को क्षमा करो, हम अज्ञान से भरे हुए हैं।
मन को ध्यान के मंदिर में रमने दो, हे मां, कृपा बरसाओ! ॥ ९६ ॥

मेरी यह ईश्वर के प्रति प्रार्थना है, कि मेरा जीवन केवल मां को समर्पित हो।
मेरा हर कदम मां की ओर मुड़ जाए, मैं उनके बालक समान बन जाऊं। ॥ ९७ ॥

यह भारतभूमि पावन है, जहां ईश्वरीय अवतार जन्म लेते हैं।
परंतु इस संसार में, उन्हें पहचानने वाले बहुत ही कम होते हैं। ॥ ९८ ॥

कुछ संत होते हैं जो राजयोग के मार्ग पर चलते हैं, कुछ हठयोग के अनुयायी होते हैं।
परंतु सत्य, निस्वार्थता और त्याग की राह पर, बहुत ही कम लोग चलते हैं। ॥ ९९ ॥

महान माता सौभाग्यशाली होती हैं, जो चंदन की तरह स्वयं को गलाती हैं।
वह परमार्थ के कार्यों में सदा लगी रहती हैं, धन्य है उनका यह कार्य। ॥ १०० ॥

माताजी की प्रतिमा प्रदान की गई, गगनगिरी महाराज की कृपा से।
शब्दों को सुंदर रूप में सजाया गया, और वे सभी पूजनीय बन गए। ॥ १०१ ॥

इस छोटे से महात्म्य का गायन हुआ, और माताजी ने इसे पूर्ण रूप से सुना।
इससे ही कवि के शब्द भी पावन हो गए, और उनका महत्व बढ़ गया। ॥ १०२ ॥

पढ़ो और सुनो, पर यदि तुम इसकी निंदा करोगे,
तो जान लो कि यह दिव्य लीला अनोखी है,
और इसके अपमान का दंड भुगतना पड़ेगा। ॥ १०३ ॥

जो कोई इस पर बुरी दृष्टि डालेगा, वह भयंकर पाप करेगा।
उसे अपने अगले जन्म में, इन पापों का दंड भोगना पड़ेगा। ॥ १०४ ॥

माताजी का कार्य कितना महान है! उनका चरित्र पर्वत के समान विशाल है।
अब इस छोटे से प्रयास को यहीं रोकते हैं, और लेखनी विश्राम लेती है। ॥ १०५ ॥

मी कलाकार डोंगरीचा । थोर आदेश तो गुरूंचा ॥
योगही आलासे भेटीचा । भेटली माता ॥ १०६ ॥

पुज्य आईचे ध्यान करूं । प्रेमानें ते चरण धरूं ॥
मानव जन्मीं या उद्धरू । योग हा आहे ॥ १०७ ॥

वाहे गंगा ती झरझर । चला जाऊं या तीरावर ॥
सांगे सकलां "मधूकर" । पामर एक ॥ १०८ ॥

॥ इति "दासमधुकृत" प० पू० भगवती "निर्मलादेवी "
माहात्म्य समाप्त ।।

॥ प० पू० भगवती निर्मलामाताजी चरणार्पणमस्तु ॥

॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॐ ॥

मैं कलाकार डोंगरी का,
गुरु का यह महान आदेश।
योग भी इस भेंट में आया,
मुझे माता मिल गई॥ १०६ ॥

पूज्य माता का ध्यान करें,
प्रेम से उनके चरण पकड़ें।
इस मानव जन्म का उद्धार करें,
यही सच्चा योग है॥ १०७ ॥

गंगा बहती है झरझर,
चलो चलें उसके तट पर।
सभी को कहता है "मधुकर",
कि मैं तो हूँ एक साधारण प्राणी॥ १०८ ॥

॥ इस प्रकार "दासमधुकृत"
प० पू० भगवती "निर्मला देवी" का माहात्म्य समाप्त॥

॥ प० पू० भगवती निर्मला माताजी चरणार्पणमस्तु ॥

॥ ॐ शांति: शांति: शांति: ॐ ॥

आरती

(चाल-साधी)

जय देवी जय देवी जय निर्मल गंगे ।
ओवाळितो आरती तुजला जय दुर्गे ॥ धृ० ॥

ठाऊक नव्हती ज्यांना ती ईश्वर-भात ।
दर्शन देशी त्यानां तूं दैवी शक्ति ॥
येऊन मानव जन्मां जी दुर्लभ शांति ।
ती सद्भक्तां लाभे पूजतां तंव मूर्ती ॥ जय० ॥ १ ॥

जय जगदंबे माते तूझी धन्य लिला ।
प्रसन्न दर्शन लाभे भाळावर टिळा ॥
मधुरवाणी तूझी कळेल ती ज्याला ।
कधींच मानवजन्मीं दु:ख नसे त्याला ॥ जय० ॥ २॥

लपून बसली आहे शरिरीं कुंडलिनी ।
क्षणात करशी जागृत स्पर्शानें जननी ॥
कलियुगीं ही माते अजब तूझी करणी ।
तूझे आगमन देवी पावन ही धरणी ॥ जय० ॥ ३ ॥

मानव-कल्याणासी तंव जीवन सगळे ।
शरिर तुझे जैसे चंदन ते झिजले ॥
कधीं न सुटणारे ते चरण तुझे धरले ।
दास "मधुकर" सांगे मजला उद्धरीले ॥ जय० ॥ ४ ॥

॥ ॐ नमो भगवती माताजी निर्मलादेवी ॐ ॥

आरती

(चाल – सरल)

जय देवी, जय देवी, जय निर्मल गंगे।
हम आरती उतारते हैं, जय दुर्गे! [ध्रुपद]
जो ईश्वर-तत्व को नहीं जानते थे,
तूने उन्हें अपना दिव्य स्वरूप दिखाया।
जो इस दुर्लभ मानव जन्म में आते हैं,
वे सच्चे भक्त बनकर तेरी मूर्ति की पूजा से शांति पाते हैं।
तेरी सदा ही जय हो! [1]

जय जगदंबा माता, तेरी लीला धन्य है।
तेरे प्रसन्न दर्शन से माथे पर तिलक सजता है।
जो तेरी मधुर वाणी को समझता है,
उसे मानव जीवन में कभी दुख नहीं सताता।
तेरी सदा ही जय हो[2]

कुंडलिनी शरीर में छुपी हुई है,
तेरे स्पर्श मात्र से, हे जननी, वह जागृत हो जाती है।
कलियुग में, हे माता, तेरी लीलाएँ अद्भुत हैं,
तेरा अवतरण, हे देवी, इस धरती को पावन बना देता है।
तेरी सदा ही जय हो [3]

मानव कल्याण के लिए तेरा सारा जीवन समर्पित है,
तेरा शरीर जैसे चंदन, धीरे-धीरे घिसता रहा।
तेरे चरणों को जिसने एक बार पकड़ लिया,
वह कभी उन्हें छोड़ नहीं सकता – "मधुकर" कहता है, तूने मुझे उद्धार दिया!
तेरी सदा ही जय हो[4]

॥ ॐ नमो भगवती माताजी निर्मलादेवी ॐ ॥

आरती

(चाल : आरती ज्ञानराजा...)

आरती तूझी गातां । निर्मळा देवी माता ॥
होई दूरी सारी चिंता । लाभती सत्य वाटा ॥ धृ० ॥

सदां मुखीं तूझे नाम । हैची साधकाचे काम ॥
तुझ्या ठायीं पुण्यधाम । लाभे आम्हां अनाथां ॥ १ ॥

तुझें गुण वर्णं कैसे । दिव्य ते तेज दिसे ॥
तुझे रूप जणूं भासे । जैसी रामाची सीता ॥ २ ॥

तंव ठायीं ध्यान राहे । आई जगताची आहे ॥
कलियुगीं जशी वाहे । भासे गंगा सरीता ॥ ३ ॥

भाग्य तुझिया हातां । आम्हां उद्धारी आतां ॥
योग सहज करितां । होई ज्ञानाचा साठा ॥ ४ ॥

आम्हीं जन संसारी । चित्त चंचल हे भारी ।
दारी आलो माम्हां तारी। मधु राही दंग गीतां ॥ ५ ॥

आरती

(चाल: "आरती ज्ञानराजा...")

तेरी आरती गाते हैं, निर्मला देवी माता,
सारी चिंताएँ दूर होती हैं, सत्य का मार्ग मिलता है। [धृ०]

तेरा नाम सदा हमारे मुख पर रहे,
यही तो साधक का कर्तव्य है।
तेरे ही चरणों में पुण्यधाम है,
जहाँ हम जैसे अनाथों को आश्रय मिलता है। [1]

तेरे गुणों का वर्णन कैसे करें?
तेरा दिव्य तेज स्पष्ट दिखाई देता है।
तेरा रूप वैसा ही प्रतीत होता है,
जैसे भगवान राम की सीता। [2]

तेरा ध्यान सदा मन में बसा रहता है,
क्योंकि तू ही इस जगत की माँ है।
कलियुग में तू ऐसे प्रवाहित होती है,
जैसे पवित्र गंगा की धारा। [3]

हमारा भाग्य तेरे ही हाथों में है,
अब हमें उध्दार कर, हे माता!
सहज योग के माध्यम से
हम सच्चे ज्ञान का खजाना पा लेते हैं। [4]

हम संसार में भटके हुए लोग हैं,
मन हमारा चंचल और बेचैन है।
तेरे द्वार पर आए हैं, हमें तार दे!
मधुकर तेरा भजन गाने में मग्न है। [5]

॥ नमस्काराष्टक ॥

हे श्रीगणेशा तुझी धन्य लीला । तुझ्या कृपे ज्ञान ते भाविकाला ॥
जी दैवीशक्ती रमे मानवात । त्या थोर माताजींना जोडूं हात ॥ १ ॥

जे या प्रपंचात रमलेत जीव । त्यांच्या सुखां देई मक्तिची ठेव ॥
जी आत्मजानां करीते समर्थं । त्या थोर माताजींना जोडू हात ॥२॥

कोणी म्हणे लक्ष्मीचे आहे दर्शन । 'माँ' ही भवानी म्हणती तिला जन ॥
जे कार्य केले तया नाही अंत। त्या थोर माताजीना जोडू हात ॥३॥

दे ज्ञानभक्तां "सहज योग" द्वारे । उद्धारिले भक्त मातेनें सारे ॥
ज्या शक्तिचे कार्य आहे अनंत । त्या थोर माताजींना जोडू हात ॥ ४ ॥

जे जे कुणां द्यावयाचे ते दिले । दानाचे द्वार सदाकाळ खुळे ॥
जी आजवर मानवां आली देत । त्या थोर माताजींना जोडू हात ॥ ५ ॥

डोळ्यातही तेज ते दिव्य आहे । साक्षात देबीच जाग्रत राहे ॥
ज्या शक्तिचे रूप बदले क्षणात । त्या थोर माताजींना जोडू हात ॥ ६ ॥

कनवाळू मातेवा मायाळू हात । फिरतो जयावर ती घन्य पाठ ॥
जी भाविकांच्या बसे अंतरात । त्या थोर माताजींना जोडू हात ॥ ७ ॥

यावे प्रथम भक्तिमार्गे रमावे । त्यानंतरी आईला ओळखावे ॥
केली " मधूची" लक्ष्मीशी भेट । त्या थोर माताजींना जोडूं हात ॥ ८ ॥

जनता जनार्दन जगीं जागविला ।
संसार सारा सुख शोभविला ॥
भजनीं भजा भक्तहो भगवतीला ।
नमस्कार नमस्कार नारायणीला ॥

नमस्काराष्टक (आठ श्लोकों में वंदना)

हे श्री गणेशा, धन्य है तेरी लीला,
तेरी कृपा से भक्तों को ज्ञान की प्राप्ति होती है।
जो दिव्य शक्ति मानव में समाई है,
उन महान माताजी को हम नमन करते हैं। [1]

जो इस संसार में माया में लिप्त हैं, उन्हें तू सच्चे सुख का अनुभव कराती है।
जो आत्मा के पथिकों को सामर्थ्य देती है, उन महान माताजी को हम नमन करते हैं। [2]

कोई कहे, यह लक्ष्मी का स्वरूप है, तो कोई इसे भवानी माँ कहता है।
इनके कार्यों का न कोई अंत है, उन महान माताजी को हम नमन करते हैं। [3]

"सहज योग" के माध्यम से ज्ञान और भक्ति दी, सभी भक्तों का उद्धार माता ने किया।
इनकी शक्ति का कार्य अनंत है, उन महान माताजी को हम नमन करते हैं। [4]

जो भी देना था, वह सब दे दिया, दान का द्वार सदा खुला रखा।
जो सदा से ही मानवता को देती रही, उन महान माताजी को हम नमन करते हैं। [5]

उनकी आँखों में दिव्य तेज है, स्वयं देवी सदैव जाग्रत रहती हैं।
जो पल भर में अपना रूप बदल सकती हैं, उन महान माताजी को हम नमन करते हैं। [6]

स्नेहमयी माता के करुणामय हाथ,
भक्तों की रक्षा में सदा तत्पर हैं।
जो भक्तों के हृदय में सदैव निवास करती हैं,
उन महान माताजी को हम नमन करते हैं। [7]

पहले भक्ति मार्ग में लीन हो जाओ,
फिर माँ की महिमा को पहचानो।
"मधु" ने लक्ष्मी माँ से साक्षात्कार किया,
उन महान माताजी को हम नमन करते हैं। [8]

जन-जन में ईश्वर तत्व को जाग्रत किया,
इस संसार को आनंद और शोभा से भर दिया।
हे भक्तों, भगवती का सुमिरन करो,
नमन, नमन हो नारायणी को।

प. पू. माताजी निर्मलादेवी यांची बहुमोल वाणी

"सहज योग"

आनंद आणि सुख यांचा शोध घेत जाणारा माणूस स्वतःला सोडून त्रिभुवन पालथे घालीत राहतो, हे विचित्र नव्हे काय? आपणच आनंदनिधान आणि सुखाचा अभिजात निर्झर आहो, हे त्याला उमगत नाही, हेच खरे.

स्वतःची स्वतःला अजिबात ओळख नसल्याने आपण म्हणजे एक रूपहीन आणि केवळ वैताग असणारे आहोत, असेच त्याला जाणवत राहते. आनंदाचा शोध माणूस घेतो तरी कशा कशांत? कोणी पैशांत, कोणी मालमत्तेत, कोणी सत्ता संपादनात, अथवा मर्यादित मानवी प्रेमभावनेत किंवा फारच झाले तर धर्मात. पण या धार्मिक गोष्टीसुद्धा सगळ्या मानवाच्या बाह्य उपाधी आहेत, अगदी धार्मिक गोष्टीं देखील.

त्याचा हा शोध बाहेर चालू असतो. अशा माणसाचे अवधान त्याच्या अंतरंगाकडे कसे वळवायचे, हीच मुख्य समस्या आहे. हे अंतरंगातील अस्तित्व म्हणजे "जागृती." ही जागृती चैतन्यरूप असते. (ईश्वरी प्रेमाचा चैतन्यरूप साक्षात्कार असे मी तिचे वर्णन करते.)

ईश्वरी प्रेमाच्या सर्वश्रेष्ठ चैतन्यशक्तीकडून जसे ज्या प्रकारचे मार्गदर्शन मिळते, त्या प्रकारे भौतिक उत्साहशक्ती कार्यप्रवण होऊन तिचा आविष्कार आणि भौतिक उत्क्रांती याचे दर्शन घडते. ही अज्ञात चैतन्यशक्ती किती विचारी आणि केवढी शक्तिमान आहे, याची आपणास माहिती नाही.

मुळीच गाजावाजा न करता कार्यप्रवण असणाऱ्या या जागृतीची चलनवलने अशा सूक्ष्मतेने, प्रेरकतेने, व्यापकतेने आपोआप होत असतात की, ते सर्व गृहीत आहे असेच आपण धरून चालतो.
या चैतन्याचा साक्षात्कार झाल्यानंतर (Self-Realization) निःशब्द अशा चैतन्य लहरीच्या स्वरूपात ते प्रथम दिसते, प्रकट होते. कोणत्याही निराकारावर आपले चित्त आपणास खिळवून ठेवता येत नाही. त्यामुळे आपले लक्ष अशा कोणत्या तरी स्वरूपात प्रतीत होणाऱ्या गोष्टीच्याच शोधात असते.

तेव्हा हे जे चैतन्य किंवा हा जो ईश्वरीशक्तीचा साक्षात्कार, जो प्राप्त करून घेण्याची पद्धती आता शोधून काढली गेली आहे, हा ईश्वरीशक्तीचा साक्षात्कार म्हणजेच आनंद. यालाच "सहज योग" असे नाव आहे.

प. पू. माताजी निर्मला देवी की बहुमूल्य वाणी

"सहज योग"

क्या यह अजीब नहीं है कि आनंद और सुख की खोज में मनुष्य पूरे ब्रह्मांड को छान मारता है, लेकिन स्वयं को ही भूल जाता है? सत्य तो यही है कि वह यह नहीं समझ पाता कि वह स्वयं ही आनंद का स्रोत और सुख का शुद्ध झरना है।

स्वयं को न पहचानने के कारण, वह स्वयं को एक रूपहीन और निराश व्यक्ति के रूप में अनुभव करता है। लेकिन मनुष्य आनंद की खोज करता ही किसमें है? कोई इसे धन में ढूंढता है, कोई संपत्ति में, कोई सत्ता के अधिग्रहण में, कोई सीमित मानवीय प्रेम में, और कुछ तो धर्म में भी तलाश करते हैं। परंतु ये सभी धार्मिक गतिविधियाँ भी मानव की बाहरी पहचान मात्र हैं, यहां तक कि धार्मिक साधनाएँ भी।

मनुष्य की यह खोज बाहरी दुनिया में ही चलती रहती है। असली समस्या यह है कि उसके ध्यान को उसके अंतरतम की ओर कैसे मोड़ा जाए। यह अंतरतम का अस्तित्व ही "जागृति" कहलाता है। यह जागृति चैतन्यस्वरूप होती है। (मैं इसे ईश्वरीय प्रेम की चैतन्यस्वरूप अनुभूति कहती हूँ।)

ईश्वरीय प्रेम की सर्वोच्च चैतन्य शक्ति से जैसे-जैसे मार्गदर्शन प्राप्त होता है, वैसे ही भौतिक ऊर्जा सक्रिय होकर प्रकट होती है और उसकी अभिव्यक्ति के रूप में भौतिक विकास दिखाई देने लगता है। यह अज्ञात चैतन्य शक्ति कितनी बुद्धिमान और कितनी शक्तिशाली है, इसका हमें जरा भी ज्ञान नहीं है।

बिल्कुल बिना किसी प्रचार के, यह जागृति अत्यंत सूक्ष्म, प्रेरणादायक और व्यापक रूप से कार्यरत रहती है। यह इतनी स्वाभाविक रूप से कार्य करती है कि हम इसे सामान्य रूप से स्वीकार कर लेते हैं।

इस चैतन्य का साक्षात्कार (Self-Realization) प्राप्त होने के बाद, यह सबसे पहले शब्दहीन चैतन्य तरंगों के रूप में प्रकट होता है। किसी निराकार पर ध्यान केंद्रित करना आसान नहीं होता, इसलिए मनुष्य का मन किसी साकार रूप में ही उसे खोजने का प्रयास करता है।

अब यह जो चैतन्य या ईश्वरीय शक्ति का अनुभव प्राप्त करने की विधि खोजी गई है, यही सच्चा आनंद है। इसे ही "सहज योग" कहा जाता है।

श्रीदत्तजयंती (ता. ९-१२-७३) रोजी स्वामी गगनगिरी महाराजांनी भाविकांना गगनगडावर दिलेला संदेश

केवलता आणि शांतिमार्ग

अपार संख्येने दत्तजयंतीकरिता इथे जमलेल्या तुम्हा प्रत्येकाला मला विचारायचे आहे—खरेच का तुम्ही जीवनाच्या मूलभूत समस्येवर विचार केला आहे? मनापासून तुम्हांला योगामागे धावायचे आहे का? उदात्त जीवनाची अनुभूती हवी आहे का?

तर मग हे लक्षात घ्या की, तुमचा मार्ग इतरांहून वेगळा आहे. तो तुम्हांलाच शोधावा लागेल.
खऱ्या आनंदाखेरीज सगळे काही आजच्या माणसाला मिळाले आहे. सुखाची खेळणी विज्ञानाने आपल्यापुढे टाकली, पण खरा आनंद हे मृगजळच राहिले. रावणाची सोन्याची लंकादेखील जळून खाक झाली, कारण मुळातच तो एक असंतुष्ट आत्मा होता.
सुख ही एक मनाची दृष्टी आहे. स्वयंभू मानव आत्मतखी असतो. तो अनंत कालाशी अनुसंधान ठेवू शकतो. असंतुष्टता आणि लालसा म्हणजे शाप. व्यक्तीकडून समाजाकडे, समाजाकडून विश्वाकडे आपल्या न संपणाऱ्या इच्छा प्रवास करतात, त्यामुळे मन थकते आणि अंतर्द्वंद्व निर्माण होतात.

वास्तवाचा डोळसपणे विचार आणि स्वीकार करायला आपण शिकूया. गरजांचे गाठोडे म्हणजे सुख नव्हे. गरज आणि लालसा यात जमीन-अस्मानाचा फरक आहे. इच्छेच्या पलीकडचा अर्थ प्रत्येकाने पकडला पाहिजे.

मला असे वाटते की, भौतिक ऐश्वर्य वाढायला लागले की निर्भेळ आनंदापासून आपण दूर जाऊ लागतो. वासनामय जीवनाचा शेवट निराशेत होतो. या उलट, आशेच्या जंजाळातून मुक्त असे जीवन अर्थमय ठरते.

या गडावरील धुक्याइतकीच दुःखे आणि वेदना धूसर असतात. मानवात अंतःप्रेरणा नसल्याने दुःख त्याच्यावर स्वार होते. दुःखाचा अर्थबोध होताच त्याला आत्मज्ञान होते.

योगाच्या भाषेत बोलायचे तर संकटे संधी निर्माण करतात. अनेक माणसे आपल्या दुःखाकरिता दुसऱ्याला दोष देतात, त्यांच्यावर टीका करतात.
खरे सांगायचे तर दुसऱ्यांच्या उणीवा उदार अंतःकरणाने सहन करायला पाहिजेत. दुसऱ्याची दुःखे स्वतःत सामावण्याची कला म्हणजेच योग.

तडकाफडकीच्या इलाजाकरिता गडावर येणाऱ्यांची गर्दी फार. मूलभूत समस्येवर प्रश्न विचारणारा असा एकादाच. येथे येणारे गरीब शेतकरी आणि धनाढ्य श्रीमंत—दोषेडी आत्मवंचनेत फसलेले, आंधळेपणाने मायेच्या जाळ्यात अडकलेले. आत्मज्ञान आणि प्रेमाचा ओलावा यांच्या अभावामुळे त्यांचे जीवन वैराण वाळवंट भासते.

क्षणाक्षणांनी जीवनाचे धागे विणले जातात. ज्याला क्षणांचे सौंदर्य भावते, त्याला स्वर्ग आणि पृथ्वीच्या संगीतातील सुसंगती कळते. आणि मग विश्वाची लय जाणवते. उत्पत्ती ही शब्दापलीकडची स्थिती आहे. पण अशा अनुभवांचे मोजमाप जर तुम्ही करीत बसलात, तर पुन्हा एकदा जगाच्या चिखलात आणि कोलाहलात तुम्ही याल. सद्भावनांची संस्कृती म्हणजेच खरा योग. अलिप्ततेचा परमोच्च गाठा. शांती हाच स्थायीभाव ठेवा. शांततेत अपार शक्ती आहे. आशेची वर्तुळे छेदून जाणाऱ्या जीवाला ईश्वरी वरदान कळते.
असा आत्मा केवल असतो. त्याचे जीवनघरटे ईश्वरी प्रेरणेने बांधले जाते.

या भारतवर्षात शतकानुशतके आपल्या थोर साधुपुरुषांनी अहिंसा आणि करुणा यांची थोर शक्ती सिद्ध करून दाखविली आहे.
त्यांचे शांत जीवन खऱ्या मैत्री व शांतीचे वातावरण निर्माण करू शकले.

शांती आणि आनंदाने जागा झालेला जीवात्मा विश्वाला मार्गदर्शक होतो. जीवन त्याच्या माध्यमातून एक नवे स्वप्न धारण करते.
हा मुक्तात्मा कृतीवाचून कृतिशील असतो. शब्दावाचून तो तत्त्वबोध करतो. इतरांकरिता जगतानाच तो आत्मसंपन्न होतो.
त्याच्या हातून सर्व घडते, पण त्याचे श्रेय मात्र तो घेण्यास तयार नसतो. जीवनाचे महान गुपित जाणण्यासाठी तो वासनेची लक्तरे टाकून देतो.

स्वयंभू ताज्याप्रमाणे त्याचे अस्तित्व हेच मानवजातीचे वरदान!

~ स्वामी गगनगिरी महाराज

प्रकाशक: कवि मधुकर ठाकूर, ४० कॅनरा हाऊस, मोगल लेन, माहीम, मुंबई - १६
मुद्रक: शरद कृ. सापळे, रामकृष्ण प्रिंटिंग प्रेस, त्रिभुवन रोड, मुंबई - ४

श्री दत्त जयंती (09-12-73) के अवसर पर स्वामी गगनगिरी महाराज द्वारा गगनगढ़ पर भक्तों को दिया गया संदेश
एकांत और शांति का मार्ग

आप सभी, जो अपार संख्या में दत्त जयंती के अवसर पर यहाँ एकत्र हुए हैं, मैं आपसे पूछना चाहता हूँ—क्या आपने वास्तव में जीवन की मूलभूत समस्याओं पर विचार किया है? क्या आप सच्चे मन से योग के मार्ग पर चलना चाहते हैं? क्या आपको एक उच्चतर जीवन का अनुभव प्राप्त करना है?

यदि हाँ, तो यह समझ लें कि आपका मार्ग दूसरों से अलग है। यह मार्ग आपको स्वयं खोजना होगा। आज के मानव को सब कुछ प्राप्त हुआ है, बस सच्चे आनंद को छोड़कर। विज्ञान ने सुख-सुविधाओं के खिलौने हमारे सामने रख दिए हैं, लेकिन वास्तविक आनंद अब भी एक मृगतृष्णा बना हुआ है। रावण की स्वर्ण नगरी लंका भी जलकर राख हो गई क्योंकि वह मूलतः एक असंतुष्ट आत्मा था।
सुख एक मानसिक दृष्टिकोण है। आत्मज्ञानी व्यक्ति स्वयं में पूर्ण होता है और अनंत काल से जुड़ा रहता है। असंतोष और लालसा एक अभिशाप हैं। हमारी इच्छाएँ व्यक्ति से समाज तक और समाज से विश्व तक निरंतर यात्रा करती रहती हैं, जिससे मन थक जाता है और आंतरिक संघर्ष उत्पन्न होते हैं।
हमें वास्तविकता को स्पष्ट रूप से देखना और उसे स्वीकार करना सीखना चाहिए। आवश्यकताओं का बोझ ही सुख नहीं है। आवश्यकता और लालसा के बीच आकाश-पाताल का अंतर है। हमें उन इच्छाओं से परे के सत्य को समझना चाहिए।
मुझे ऐसा लगता है कि जैसे-जैसे भौतिक संपन्नता बढ़ती है, हम सच्चे आनंद से दूर होते जाते हैं। वासनामय जीवन का अंत केवल निराशा में होता है। इसके विपरीत, आशा के बंधनों से मुक्त जीवन ही अर्थपूर्ण बनता है।

इस पर्वत पर फैले कोहरे की तरह ही दुख और पीड़ा भी धुंधली होती हैं। मनुष्य में यदि आंतरिक प्रेरणा न हो, तो दुख उस पर हावी हो जाता है। लेकिन जैसे ही वह अपने दुख का सही अर्थ समझता है, उसे आत्मज्ञान प्राप्त होता है।
योग के दृष्टिकोण से, संकट अवसर पैदा करते हैं। बहुत से लोग अपने दुखों के लिए दूसरों को दोष देते हैं और उनकी आलोचना करते हैं।
सच तो यह है कि हमें दूसरों की कमियों को उदार हृदय से स्वीकार करना चाहिए। दूसरों के दुखों को अपने भीतर समाहित करने की कला ही योग है। जल्द समाधान की तलाश में यहाँ आने वालों की भीड़ बहुत अधिक है, लेकिन जीवन की मूलभूत समस्याओं पर प्रश्न करने वाला कोई एक-दो ही होते हैं।
यहाँ आने वाले गरीब किसान हों या धनाढ्य अमीर—अधिकांश आत्मवंचना में उलझे हुए हैं, मोह-माया के जाल में अंधे होकर फंसे हुए हैं। आत्मज्ञान और प्रेम की मधुरता के अभाव में, उनका जीवन एक उजाड़ रेगिस्तान सा प्रतीत होता है।
क्षण-क्षण से जीवन की बुनावट होती है। जो व्यक्ति हर क्षण की सुंदरता को अनुभव करता है, वह स्वर्ग और पृथ्वी की संगीतात्मक संगति को समझता है, और तब उसे पूरे ब्रह्मांड की लय का आभास होता है। सृजन शब्दों से परे की स्थिति है, लेकिन यदि आप इन अनुभवों को मापने का प्रयास करते हैं, तो आप फिर से संसार के कीचड़ और कोलाहल में लौट आएंगे।
सद्भावना की संस्कृति ही सच्चा योग है—निर्लिप्तता की परम अवस्था।

शांति को अपनी स्थायी स्थिति बनाइए। शांति में असीम शक्ति है। जो जीव आशाओं के चक्र को पार कर जाता है, वह ईश्वरीय वरदान को समझता है। ऐसा आत्मा केवल होता है। उसका जीवन ईश्वरीय प्रेरणा से निर्मित होता है।

इस भारतभूमि में शताब्दियों से हमारे महान संतों ने अहिंसा और करुणा की शक्ति को सिद्ध करके दिखाया है।
उनका शांत जीवन सच्ची मित्रता और शांति का वातावरण बना सका।
शांति और आनंद से जाग्रत जीव आत्मा संपूर्ण विश्व के लिए मार्गदर्शक बन जाती है। जीवन उसके माध्यम से एक नई दृष्टि प्राप्त करता है।
यह मुक्त आत्मा कर्म किए बिना भी कर्ता होता है। वह शब्दों के बिना भी तत्वज्ञान का उपदेश देता है।
दूसरों के लिए जीते हुए भी वह आत्मसंपन्न होता है।

सब कुछ उसके माध्यम से घटित होता है, लेकिन वह कभी इसका श्रेय लेने को तैयार नहीं होता।
जीवन के इस महान रहस्य को समझने के लिए, वह वासनाओं के पुराने वस्त्र त्याग देता है।
स्वयंभू पर्वतों की तरह, उसका अस्तित्व ही मानव जाति के लिए एक वरदान होता है!

~ स्वामी गगनगिरी महाराज

प्रकाशक: कवि मधुकर ठाकुर, 40 कैनरा हाउस, मोगल लेन, माहिम, मुंबई - 16
मुद्रक: शरद कृ. सापळे, रामकृष्ण प्रिंटिंग प्रेस, त्रिभुवन रोड, मुंबई - 4